बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 61

नया रिलायंस

रिलायंस इंडस्ट्रीज एक दिलचस्प कायाकल्प से गुजर रही है। दूरसंचार एवं खुदरा क्षेत्र जैसे नए कारोबारों की अब कंपनी के कुल राजस्व में हिस्सेदारी चौथाई तक जा पहुंची है। अगर इसमें मीडिया जैसे नए कारोबार को भी जोड़ दें तो कंपनी के ऊर्जा कारोबार की हिस्सेदारी 70 फीसदी से भी नीचे आ जाएगी। रिलायंस समूह के नए कारोबारों के आंकड़े छोटे-मोटे नहीं हैं। खुदरा कारोबार और जियो ने वित्त वर्ष 2018-19 में करीब 1.77 लाख करोड़ रुपये का राजस्व कमाया है। जियो की दस्तक ने तो भारतीय दूरसंचार बाजार में हलचल ही मचा दी थी और मार्च 2019 आने तक यह 30 करोड़ उपभोक्ताओं के साथ देश की तीसरी बड़ी दूरसंचार कंपनी बन चुकी है। पांच साल पहले देश की सबसे बड़ी खुदरा कंपनी होने के बावजूद रिलायंस रिटेल का कुल राजस्व में अंशदान पांच फीसदी से भी कम था और उसे समूह के भीतर 'अन्य' श्रेणी में ही रखा जाता था। उस समय तो रिलायंस का दूरसंचार कारोबार शुरू भी नहीं हुआ था। शेयरधारकों के लिए यह सफर खासा मुनाफापरक रहा है।

सितंबर 2016 में जियो की शुरुआत होने के बाद से आरआईएल के शेयर करीब 170 फीसदी चढ़ चुके हैं। आरआईएल ने तेल व्यवसाय की चक्रीय प्रकृति को देखते हुए अपने कारोबार में विविधता लाने के इरादे से बड़ी मात्रा में नकदी नए कारोबारों में लगाई। करीब एक दशक से वर्ष 2017 तक रिलायंस के शेयर अपेक्षाकृत सीमित दायरे में बने हुए थे। बीच में 2008 के दौरान उठापटक का दौर भी रहा। रिफाइनिंग एवं पेट्रो-रसायन क्षेत्र में क्षमता बढ़ाने से इतर फंड डालने की भी जरूरत थी। लेकिन रिलायंस के मुख्य व्यवसाय से जुड़े तेल एवं गैस उत्खनन और शेल गैस में विविधता लाने के भी बहुत अच्छे नतीजे नहीं आ रहे थे। ऐसी स्थिति में रिलायंस इंडस्ट्रीज ने खुदरा एवं दूरसंचार पर ध्यान देने का फैसला किया। आरआईएल की संचार, कंटेंट एवं कॉमर्स गतिविधियों के सम्मिलन की मंशा को देखते हुए अब उसके पास कई विकल्प हो गए हैं।

हालांकि कुछ संकेत चेतावनी भी देते हैं। नए कारोबारों में सफलता भारी निवेश के दम पर आई है। अकेले जियो में ही तीन लाख करोड़ रुपये का निवेश हुआ है। जियो ने 2017-18 में शुद्ध लाभ दिखाया था लेकिन उसकी बड़ी वजह मूल्यह्रास नीति थी। जियो को कम लागत के कर्ज मिले हैं और उसमें पूंजी भी अपने समकक्षों की तुलना में बेहतर ढंग से लगी है। उसे मूल कंपनी आरआईएल से काफी मदद भी मिली है। ऐसे में विश्लेषकों का मानना है कि भारती एयरटेल एवं वोडा-आइडिया की तरह अगर जियो को भी अकाउंटिंग मानकों का पालन करना पड़े और समान पूंजी लागत आए तो वह भी लाभ की स्थिति में नहीं रह जाएगी।

आरआईएल ने जियो के लिए बैलेंस शीट पर बोझ कम करने के लिए अपने फाइबर एवं टॉवर परिसंपत्तियों को 1.07 लाख करोड़ रुपये की देनदारी के साथ दो ढांचागत निवेश ट्रस्टों को हस्तांतरित कर दिया। लेकिन इसका लाभ नया निवेशक आने के बाद ही मिल पाएगा। भले ही इससे आरआईएल का शुद्ध ऋण दिसंबर 2018 के 2.78 लाख करोड़ से घटकर 2.02 लाख करोड़ रुपये पर आ गया है लेकिन इससे अप्रभावित लोगों ने इस पहल को महज 'ऑप्टिकल' बताया है। जियो को टॉवर एवं फाइबर परिसंपत्तियों का किराया भी देना होगा जो मूल्यह्रास एवं ब्याज लागत में कटौती को प्रभावित कर सकता है। शुल्क दरों में बढ़ोतरी के कोई आसार नहीं होने से जियो की लाभप्रदता में फिलहाल सुधार आना एक और समस्या है। इस दौरान कारोबार में नए निवेश की मांग बनी रहेगी और नए कारोबारों का समेकन भी होगा। इस तरह आरआईएल को कर्ज का बोझ बढ़ने से रोकने के लिए कुछ गंभीर उपायों पर विचार करना होगा। उस संदर्भ में रिफाइनिंग एवं पेट्रो-रसायन कारोबार का 25 फीसदी हिस्सा बेचने का कदम विवेकपूर्ण लगता है।

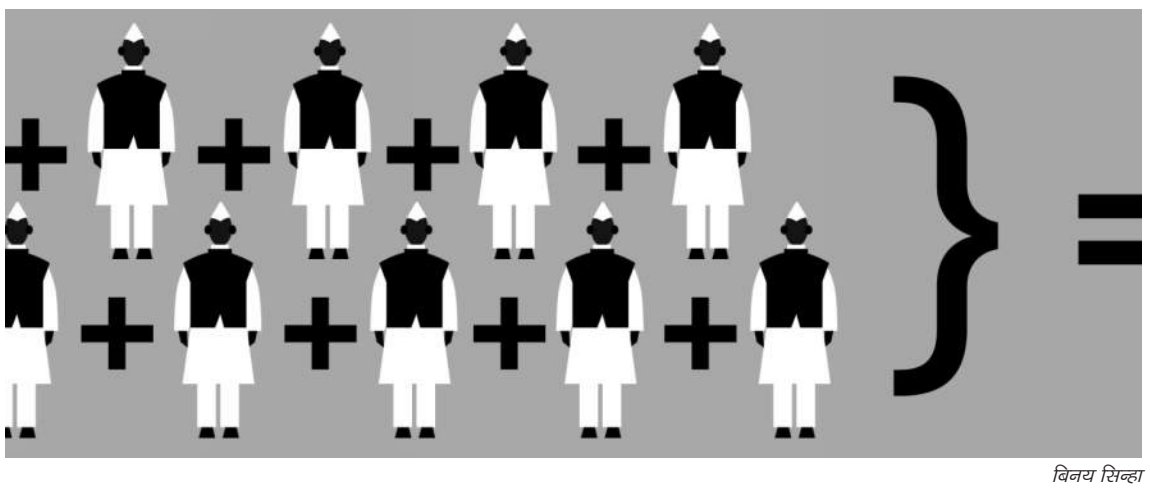

बिनय सिन्हा

कांग्रेस की वापसी के लिए क्या है जरूरी ?

भाजपा को दोबारा सत्ता में आने से रोक पाने की ताकत केवल कांग्रेस में ही है। लेकिन इसके लिए उसमें जरूरी संकल्प, प्रतिबद्धता, संगठन और निर्णायक अंदाज नजर नहीं आया है

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री कमलनाथ मौजूदा आम चुनावों में कांग्रेस के लिए लक्ष्य की तरफ इशारा करने वाले वरिष्ठतम पार्टी नेता हैं। उन्होंने कहा है कि वर्ष 2014 की तुलना में इस बार कांग्रेस अपनी सीटें तिगुनी कर लेगी। पार्टी के डेटा प्रमुख प्रवीण चक्रवर्ती भी ऐसा अनुमान जता चुके हैं। कमलनाथ ने वर्ष 2019 के आम चुनाव में कांग्रेस के मुख्य लक्ष्य पर भी रोशनी डाली है। उनका कहना है कि नरेंद्र मोदी को लगातार दूसरी बार प्रधानमंत्री बनने से रोकने के लिए कांग्रेस की इतनी सीटें काफी होंगी।

आश्चर्य नहीं है कि इस बयान का भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) से अधिक कांग्रेस समर्थकों ने उपहास उड़ाया। उनका कहना था कि वह पार्टी विक्षिप्त ही होगी जो नई सरकार बनाने के लिए पर्याप्त सीटें लाने का दावा भी न कर पाए। यह एक तरह से चुनाव अभियान के बीच में ही हार मानने जैसा है। पिछली बार मिली 44 सीटों की अगर तिगुनी सीटें कांग्रेस जीत भी लेती है तो वह 132 सीटें ही होंगी। अगर कांग्रेस ने इतना ही लक्ष्य रखा है तो फिर उसे 100 का आंकड़ा पार करने में भी दिक्कत होगी।

ये तमाम आपत्तियां तथ्यात्मक रूप से सही लेकिन राजनीतिक रूप से गलत हैं। आखिर कैसे ? अगर भाजपा 200 सीटों तक पहुंच जाती है तो वह निश्चित रूप से अगली सरकार बना लेगी। उसे सरकार बनाने से रोकने का इकलौता रास्ता यही है कि उसे 200 के नीचे रोक दिया जाए।

वर्ष 2019 के लिए भाजपा और कांग्रेस का 'कैंची' ग्राफिक्स बनाते हैं। अगर मोदी-शाह की अगुआई वाली भाजपा का न्यूनतम लक्ष्य 200 सीटों का है तो वे उस बिंदु पर गहरी नजर रखेंगे जहां इस कैंची के दोनों सिरे क्रॉस करते हैं। इस बिंदु पर कांग्रेस महज 100 तक ही पहुंच पाती है। अगर कांग्रेस तीन अंकों तक पहुंचती है तो फिर भाजपा 200 के नीचे आ जाएगी। कांग्रेस 100 के ऊपर जितनी सीटें जीतेगी, भाजपा 200 से उतनी ही कम होती जाएगी। मैं यह नहीं कह रहा कि कांग्रेस इतनी सीटें जीतने ही जा रही है।

मेरे हिसाब से कांग्रेस का 100 सीटों पर पहुंचना ही एक अहम पड़ाव है। कांग्रेस अगर 132 के लक्ष्य तक पहुंच जाती है तो फिर वह मोदी को दोबारा सत्ता में आने से रोक सकती है। कांग्रेस ने 2004 में 132 से 12 सीटें ही अधिक सीटें जीती थी लेकिन वह संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार बनाने में सफल रही थी। एक बार फिर मैं यह नहीं कह रहा कि ऐसा ही होगा। मेरा बस यह कहना है कि 132 के लक्ष्य का मजाक न उड़ाएं।

अब 2014 की समीक्षा करते हैं। भाजपा को मिली 282 सीटों में से 167 पर कांग्रेस दूसरे स्थान पर रही थी। इसका मतलब है कि मोदी लहर का समूचा तानाबाना कांग्रेस के पूर्ण पराभव के इर्दगिर्द बुना गया था। कांग्रेस 206 सीटों से गिरकर 44 पर सिमट गई और उसकी हारी हुई अधिकांश सीटें भाजपा के पास गई थीं। भाजपा ने समाजवादी पार्टी (सपा) और बहुजन समाज पार्टी (बसपा) से भी 38 सीटें छीनी थीं। अब अगर कांग्रेस को 100 तक पहुंचना है तो उसे भाजपा से 60 सीटें छीननी होंगी। उत्तर प्रदेश में सपा एवं बसपा से ली गई सीटें इस बार भाजपा को उन्हें लौटानी पड़ सकती हैं और यह बात निर्णायक हो सकती है। मैं यह नहीं कह रहा कि ऐसा होने ही जा रहा है।

कांग्रेस को पिछली बार 44 सीटें 16 राज्यों से मिली थीं। केवल कर्नाटक में ही वह 10 सीटों के साथ दहाई में पहुंची थी। उसके बाद सात सीटों के साथ केरल का स्थान था। बाकी 27 सीटें 14 राज्यों में बिखरी हुई थीं और वे सभी सीटें स्थानीय उम्मीदवारों की निजी ताकत के दम पर आई थीं। कांग्रेस जिन 167 सीटों पर भाजपा के बाद दूसरे स्थान पर रही थी, उनमें से 14 पर मतों का अंतर दस फीसदी से कम था। कोई भी चुनाव विश्लेषक यही कहेगा कि 10 फीसदी मत-अंतर को पाटना भूस्खलन को रोकने जैसा है। इसी तरह 10 से 15 फीसदी अंतर वाली छह सीटें थीं। बाकी सीटों पर दोनों दलों को मिले मतों का अंतर 75 फीसदी तक रहा था।

अब राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में कांग्रेस को मिली जीत पर नजर डालते हैं। इन नतीजों ने 2014 की करारी शिकस्त को पलटने का काम किया। इसका मतलब है कि इन राज्यों में कांग्रेस मतदाताओं का समर्थन जुटा सकती है। सैकड़ा मारने की कोशिश में लगी पार्टी को इन तीनों राज्यों से मिलाकर 30 सीटें जीतनी ही होंगी। छत्तीसगढ़ में शानदार प्रदर्शन के आधार पर वह वहां बेहतर नतीजों की उम्मीद कर सकती है। लेकिन मध्य प्रदेश और राजस्थान को मिलाकर 25 सीटों की उम्मीद करना अधिक आशावादी होगा। लोकसभा चुनाव में मोदी के पक्ष या विपक्ष में मतदान होने से विधानसभा चुनावों का रुख कायम नहीं भी रह सकता है।

लोकसभा चुनावों के बीच में पहुंचने के बाद यही स्थिति है। अब भी इसके नतीजे खुले हुए हैं। भले ही सबसे ज्यादा नजरें उत्तर प्रदेश पर लगी हैं लेकिन फैसला आखिरकार मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, महाराष्ट्र, झारखंड और असम एवं अन्य राज्यों की करीब 150 सीटों पर होगा जहां भाजपा और कांग्रेस आमने-सामने हैं।

मोदी और अमित शाह को मालूम है कि केवल कांग्रेस ही उन्हें सत्ता से दूर रख सकती है। शायद इसीलिए मोदी उन जगहों पर भी कांग्रेस पर ही हमलावर हैं जहां कांग्रेस मुख्य मुकाबले में भी नहीं है। मोदी के लिए भी कांग्रेस को 100 के नीचे रखना जरूरी है जितना कांग्रेस के लिए मोदी को 200 के नीचे लाना।

अगर कांग्रेस ने मोदी को रोकने के लिए 132 का लक्ष्य तय किया था तो वह तीन महीने पहले था। कांग्रेस ने उसके बाद इस लक्ष्य की दिशा में कैसे कदम बढ़ाए हैं ? क्या उसने जरूरी समर्पण, प्रतिबद्धता, संगठन और निर्णायक अंदाज दिखाया है ?

यह सवाल हमें हरियाणा के डबवाली कस्बे से होकर गुजरने वाले राजमार्ग पर ले जाता है। पत्रकारों की एक टीम डबवाली में कच्ची शराब पीने से हुई मौत के बड़े हादसे की कवरेज के बाद लौट रही थी। 1980 के दशक की उस रात हमारे साथ विपक्ष के नेता देवीलाल भी थे। सड़क पर एक खरगोश को देखकर ड्राइवर ने अचानक ब्रेक लगा दिया लेकिन इधर-उधर भागते रहने से खरगोश पहिये के नीचे आ ही गया। उस घटना के बाद देवीलाल ने हमें एक कहानी सुनाई। देवीलाल ने बताया कि वह अविभाजित पंजाब के मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों के साथ कहीं जा रहे थे तब भी ऐसा हुआ था। देवीलाल के मुताबिक, 'कैरों ने कार रोकने के बाद कहा था कि एक दिन नेहरु के साथ भी यही होगा। तुम्हें बाएं या दाएं जाना होता है। कोई भी असमंजस में नहीं रह सकता है।'

अब उसी बात को कांग्रेस पर लागू करते हैं जिसकी कमान नेहरु की तीसरी पीढ़ी के पास है। उत्तर प्रदेश में सपा-बसपा और दिल्ली में आम आदमी पार्टी के साथ गठबंधन का सवाल हो या ममता बनर्जी, के चंद्रशेखर राव एवं नवीन पटनायक से संपर्क साधने की बात हो या कर्नाटक में जनता दल सेक्यूलर के साथ खुलकर खड़े होने की बात हो और अब वाराणसी से प्रियंका गांधी के चुनाव लड़ने को लेकर बनी अनिश्चितता हो ? इन सभी मामलों में राहुल गांधी की पार्टी कार की तेज रोशनी से घबराए खरगोश जैसी नजर आती है।

अगर यह बहाना बनाया जाता है कि पार्टी को भविष्य के लिए खुद को तैयार करना है तो यह एक कोरी-कल्पना ही है। क्रिकेट की तरह राजनीति में भी कोई अपनी पहली पारी इसलिए नहीं बरबाद कर देता कि वह दूसरी पारी खेलना चाहता है। कांग्रेस को मनमोहन सिंह से ही कुछ सीख लेनी चाहिए। मनमोहन ने नोटबंदी पर चर्चा के दौरान मेनार्ड कीन्स को उद्धृत करते हुए कहा था, लंबे समय में हम सभी मर जाते हैं। इस मामले में तो कम समय में ही मरने का जोखिम है।

चुनावी बॉन्ड पर फौरी सुनवाई न होने से चूके एक और मौका

बाअदब

सोमशेखर सुंदरेशन

चुनावी बॉन्ड के बारे में किसी भी ऐसी प्रतिक्रिया का आना मुश्किल है जिसमें हंसी, निराशा, कुंठा और दिल्लगी जैसे मनोभावों का समावेश न हो। आम चुनावों के जारी रहने के बीच में चुनाव आयोग ने उच्चतम न्यायालय ने यह शपथ-पत्र दिया है कि चुनावी बॉन्ड जोखिम से खाली नहीं हैं।

पहले घटनाक्रम पर नजर दौड़ाते हैं। चुनावी बॉन्ड के बारे में पहली बार जिक्र फरवरी 2017 में पेश आम बजट में आया था। चुनावी बॉन्ड को जनवरी 2018 में जाकर लॉन्च किया गया। एक गैर-सरकारी संगठन ने उसके अगले ही महीने एक रिट याचिका दायर कर इसे चुनौती दी। इस बॉन्ड के जरिये अरबों रुपये राजनीतिक दलों की तिजोरी में पहुंच गए हैं। इस दौरान कई राज्यों में विधानसभा और स्थानीय निकायों के चुनाव संपन्न हो चुके हैं। अब लोकसभा चुनावों की प्रक्रिया शुरू हो जाने के बाद इस रिट याचिका पर विचार किया गया। लेकिन मामलों पर सुनवाई को फिर स्थगित कर दिया गया।

किसी भी बॉन्ड के ढांचे पर एक नजर डालते हैं। मान लीजिए आप 15 दिनों की अवधि वाला बॉन्ड खरीदने के लिए भारतीय स्टेट बैंक जाते हैं। उस बॉन्ड को आप किसी भी राजनीतिक दल को भेंट में दे सकते हैं और इसमें आपकी गोपनीयता की पूरी गारंटी होगी। न तो आपको इस बॉन्ड की खरीद के बारे में खुलासा करना है और न ही आपको चंदे में यह बॉन्ड लेने वाली पार्टी के बारे में जानकारी देने की जरूरत है। ऐसे में राजनीतिक दल यह दावा कर सकते हैं कि उन्हें तो दानकर्ताओं के बारे में कुछ पता ही नहीं है। हालांकि यह महज मजाक ही नहीं है क्योंकि दलों को खूब पता होता है कि उन्हें बॉन्ड के रूप में चंदा किसने दिया है ? उन्हें नकद में चंदा देने वालों के बारे में भी पता होता ही है। ये बॉन्ड दलों को अनामता का कानूनी आवरण पहनाते हैं और उन्हें चंदा देने वाले की पहचान उजागर करने की बाध्यता से भी छूट मिल जाती है।

राजनीतिक दलों की इस मिली-जुली साजिश ने राजनीतिक चंदों में पारदर्शिता लाने के लिए प्रयासरत एक संस्था को पहले ही कुंठित किया हुआ है। मुख्य सूचना आयुक्त ने सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत राजनीतिक चंदे से जुड़ी जानकारियां सार्वजनिक करने का निर्देश दिया हुआ था लेकिन चुनावी बॉन्ड के रूप में दलों को यह दिखावा करने का लाभ दे दिया है कि उन्हें चंदा देने वाले के बारे में जानकारी ही नहीं है।

संक्षेप में, बॉन्ड राजनीतिक दलों की फंडिंग के स्रोत न बताने को वैधता देने वाली एक आधिकारिक युक्ति है। इसे दूसरी तरह से देखें तो चुनावी बॉन्ड चंदा-शोधन की एक सरकारी प्रणाली है। अटॉर्नी जनरल ने कथित तौर पर उच्चतम न्यायालय में ऐसी दलीलें दी हैं कि राजनीतिक दलों को चंदा देने वालों के बारे में जानने की लोगों को कोई जरूरत नहीं है। राजव्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा यह है कि सरकार बनाने के लिए नागरिकों से मत मांगने वाले दलों को फंड मुहैया कराने वालों के बारे में कोई जानकारी ही न हो। इसके चलते हमें पता ही नहीं होता है कि सरकार किन समूहों के दबाव के आगे झुक सकती है ?

भारतीय चुनाव आयोग एक संवैधानिक संस्था है। उच्चतम न्यायालय जो काम केवल न्यायिक ढंग से कर सकता है उसे चुनाव आयोग अर्द्ध-न्यायिक ढंग से अंजाम दे सकता है। नेताओं की जिंदगी पर बनी फिल्मों का प्रसारण रोकना इसका एक उदाहरण है। लेकिन इसके लिए भी उच्चतम न्यायालय को चुनाव आयोग को उसकी शक्तियां याद दिलाने की जरूरत पड़ी। यह इस संवैधानिक संस्था की नाकामी मानी जाएगी।

इस कड़ी में अगला नाम अदालतों का है। देश की सर्वोच्च अदालत का असली काम गणराज्य के भविष्य के लिए रणनीतिक अहमियत रखने वाले ऐसे मामलों पर गौर करना है। चुनावी बॉन्ड की घोषणा नोटबंदी की तरह रातोरात नहीं की गई थी। बॉन्ड योजना वास्तव में शुरू करने के करीब साल भर पहले उसका ऐलान किया गया था और ऐलान के एक महीने बाद ही रिट याचिका दायर की गई थी। इस तरह उच्चतम न्यायालय के पास उस याचिका की सुनवाई के लिए समय था। यानी अगर चुनाव आयोग ने कुछ नहीं किया तो उच्चतम न्यायालय ने भी कुछ नहीं किया।

निष्पक्ष ढंग से कहें तो यह रवैया केवल चुनावी बॉन्ड को चुनौती देने वाली याचिका तक ही सीमित नहीं है। दूरगामी महत्त्व वाला हरेक निर्णय घोषणा होने के कुछ समय बाद लागू हो जाता है और फिर उस पर सुनवाई शुरू होती है जिससे यह पूरी कवायद महज अकादमिक परिचर्चा का विषय बनकर रह जाती है। नोटबंदी के मामले में भी कोई फौरी राहत नहीं दी गई थी जबकि उसमें कई गंभीर कानूनी अनियमितताएं थीं। इन याचिकाओं पर जब विचार होता है तो वह अकादमिक विमर्श ही माना जाता है। इसी तरह से आधार और धन विधेयक करार दिए गए कई विधेयकों के मामले में भी यही हुआ। आधार जिंदगी के सभी पहलुओं पर छा चुका था, तब जाकर उस पर सुनवाई शुरू हुई।

इसी महीने एक और रोचक मामले का निपटारा हुआ है। उच्चतम न्यायालय ने एनरॉन की दाभोल परियोजना से संबंधित मुकदमे को इस आधार पर बंद करने का फरमान सुनाया है कि अब कोई प्रभावी आदेश नहीं जारी किया जा सकता है।

दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश में चुनावी बॉन्ड से संबंधित घटनाक्रम ट्रेजडी एवं कॉमेडी का मिला-जुला रूप हो सकते हैं। हमें सोचना होगा कि आखिर कहां पर हम रास्ते से भटक गए हैं ?

(लेखक एक अधिवक्ता एवं स्वतंत्र परामर्शदाता हैं)

कानाफूसी

मुलायम संकेत

समाजवादी पार्टी संरक्षक मुलायम सिंह यादव लगातार भ्रमित करने वाले संदेश देते रहते हैं। मौजूदा लोकसभा के आखिरी सत्र में उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की प्रशंसा की थी और कहा था कि उन्होंने मोदी की वापसी की प्रार्थना की। हाल ही में उन्हें अपने समर्थकों से कहते हुए सुना गया, '38 में लाल, बाकी में शिवपाल।' विदित है कि उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी गठबंधन में 38 सीटों पर सपा प्रत्याशी चुनाव लड़ रहे हैं और उनका संकेत है कि सपा प्रत्याशियों वाली सीटों पर पार्टी के लिए वोट करें और शेष पर उनके भाई शिवपाल के लिए। यह संदेश सपा प्रशंसकों के बीच प्रसारित हो रहा है। हालांकि इससे बहुजन समाज पार्टी के समर्थक नाराज हैं जो सपा-बसपा गठबंधन से बसपा को अधिक मत मिलने की उम्मीद कर रहे थे।

वार से आहत पवार

राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के शरद पवार देश के दिग्गज नेता हैं लेकिन वह भारतीय जनता पार्टी द्वारा की जा रही बयानबाजी से व्यक्तिगत रूप से आहत हैं। नवंबर 2016 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा था, 'पवार ने विधायक या सांसद रहते हुए राजनीति में 50 साल का समय पूरा कर लिया है जो भारतीय राजनीति के इतिहास में एक उपलब्धि है। मुझे यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि पवार ने मेरी उंगली पकड़कर आगे बढ़ाया और गुजरात के मेरे शुरुआती दिनों में मुझे चलना सिखाया। उन्होंने मुझे राजनीतिक जीवन जीने का मार्ग दिखाया।' लेकिन अब चुनाव प्रचार के समय मोदी पवार को लेकर कटु शब्दों का प्रयोग कर रहे हैं और महाराष्ट्र में एक ही परिवार के शासन की आलोचना कर रहे हैं। पवार ने कहा, 'मैंने वर्धा में प्रधानमंत्री मोदी का भाषण सुना। सूखा पीड़ित किसानों को राहत देने के बजाए वह मेरे परिवार को निशाना बना रहे थे..... उन्हें मेरे परिवार के लिए चिंतित नहीं होना चाहिए।' पुराने राजनीतिकों की तरह पवार निजी मामलों को राजनीति में तूल देने पर विश्वास नहीं करते लेकिन यह राजनीति का नया दौर है।

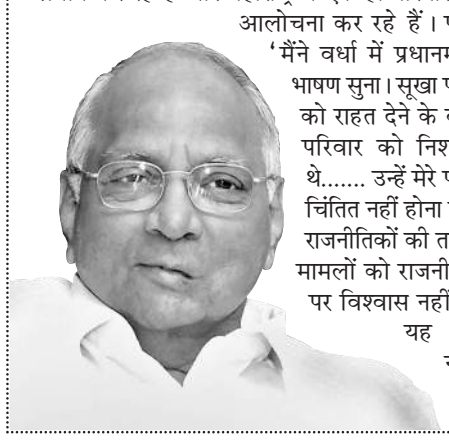

आपका पक्ष

बढ़ती आबादी के साथ बढ़ती समस्याएं

देश की आबादी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। हाल में संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2010 से 2019 के बीच देश की जनसंख्या 1.2 की औसत वार्षिक दर से बढ़कर 1.36 अरब हो गई है। यह वृद्धि दर चीन के मुकाबले दोगुनी से अधिक है। आबादी बढ़ने के साथ-साथ संसाधनों का इस्तेमाल भी बढ़ता जा रहा है। इसके अलावा तकनीक के बढ़ते चलन से रोजगार की समस्या भी उत्पन्न होने लगी है। देश की जनसंख्या वर्ष 1969 में 54.15 करोड़ थी जो 1994 में बढ़कर 94.22 करोड़ हो गई। वर्ष 2019 में देश की जनसंख्या 1.36 अरब हो गई है। जनसंख्या बढ़ने की दर अधिक है लेकिन इस दर के मुकाबले अन्य संसाधनों की वृद्धि नहीं हो सकी। तकनीक बढ़ने के कारण मानव श्रम कम होता जा रहा है। मानव का स्थान मशीन या रोबोट ने ले लिया है। इससे बेरोजगारी बढ़ रही है। सीमित धरती में कृषि तथा अन्य संसाधनों की उपलब्धता सीमित है। ऐसे में जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने की जरूरत है। हालांकि सरकार ने जनसंख्या नियंत्रण के लिए योजनाएं चला रखी हैं लेकिन इसके परिणाम सकारात्मक नहीं रहे। इस कारण देश की आबादी आज 1.36 अरब हो गई है। तकनीक के इस दौर में हमें भी तकनीक अपनाने तथा इसे सीखने की जरूरत है। आज बाजार में चीन के उत्पादों की भरमार है क्योंकि वहां घर-घर में तकनीक सीख कर उत्पाद बनाए जाते हैं। भारत के लोग आज भी घरों में अचार, पापड़ जैसे उत्पाद बनाने से ऊपर नहीं उठ सके हैं। अत: हमें तकनीक के इस दौर में कदम से कदम मिलाकर चलने में हर घर में तकनीक से जुड़े और तकनीक से ही बनने वाले उत्पादों की जरूरत है। अगर यह योजना कारगर होती है तो हमारी बड़ी आबादी उसी के अनुरूप परिणाम दे सकती है।

किशोर कुमार, नोएडा

देश की बढ़ती जनसंख्या का सही दिशा में उपयोग किया जाए तो यह वरदान साबित होगी

शिक्षा में सुधार की दरकार

देश की शिक्षा व्यवस्था में सुधार की जरूरत है। आज अंग्रेजी काफी महत्त्वपूर्ण हो गई है। बच्चे इसी पर अधिक जोर देते हैं, जबकि यह सिर्फ एक भाषा है। बच्चों को सभी विषयों पर समान ध्यान देने की जरूरत है। अंग्रेजी विषय को भाषा तक पढ़ने की ही जरूरत है। 9वीं तथा 10वीं कक्षा में देश के महान पुरुषों की जीवनी पर आधारित कहानियों की पुस्तक पढ़ाने की जरूरत है। विदेशी कहानियों के बदले देश की महान विभूतियों की जीवनी से बच्चों को प्रेरणा मिलेगी। विषय की पढ़ाई के साथ प्रयोगशाला में प्रयोग करवाना भी जरूरी है। सिर्फ रसायन विषय पढ़ने या रटने से काम नहीं चलेगा। प्रयोगशाला में रसायनों के प्रयोग से उनकी बारीकी समझ में आएगी। आज के बच्चों का अधिकतर समय मोबाइल में व्यतीत होता है। मोबाइल में गेम खेलने तथा सोशल मीडिया से बच्चों का समय बरबाद हो रहा है। इसके लिए अभिभावकों को अपने बच्चों को एक तय उमर तक मोबाइल नहीं देना चाहिए। बच्चों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जिससे उनमें रचनात्मक ज्ञान आ सके। वह सिर्फ नौकरी करने के पीछे न भागें बल्कि अपनी रचनाशीलता से नौकरियों का सृजन भी करे। बच्चों को अच्छे संस्कार देने के लिए भी प्रयास किए जाने चाहिए।

अमित कुमार, सारण

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।